भारत के सनातन धर्म के निम्बांर्क दर्शन व सम्प्रदाय

वैदिक युगोत्तर ऋषियों का ध्यानलब्ध दर्शन हुआ 'वेद'। ''ब्रह्माक्षरसमुद्भबन् '' (गीता ३/१५)–

–अर्थात् वेद अक्षर परमात्मा ब्रह्म से समुद्भूत है। क्रान्तदर्शी ऋषि गुरु परम्परा से शिष्यों को वही ध्यान लब्ध दर्शन की उपलब्धि सुनाते हैं। वेद को श्रुति कहते हैं। श्रीकृष्ण द्वैपायन वेदव्यास ने सनातन धर्म के इस श्रुति को ऋक्, साम, अथर्व और यजुः इन चार भागों में विभक्त किया था। वेद किसी ग्रंथ विशेष का नाम नहीं है। यह है एक समग्र सनातन साहित्य। इस साहित्य को तीन भागों में बाँटा गया है – संहिता, ब्राह्मण और उपनिषद्। संहिता और ब्राह्मण याग-यज्ञ प्रवृति अनुष्ठान की और उसकी प्रणाली, उद्देश्य एवं उसकी दार्शनिक व्याख्या है। अध्यात्म ज्ञान जो हिन्दू धर्म का वैशिष्ट्य है, उपनिषद् में उसी की आलोचना है। इस उपनिषद् का सार हुआ वेदान्त दर्शन। भारत में छः महान क्रान्तदर्शी आचार्यों ने इस वेदान्त दर्शन की भाष्य रचना अपने-अपने मतानुसार की है। ये सभी हुए – १) श्रीशंकराचार्य (अद्वैतवाद), २) श्रीनिम्बार्काचार्य (द्वैताद्वैतवाद), ३) श्रीमाध्वाचार्य (द्वैतवाद), ४) श्रीरामानुजाचार्य (विशिष्ट-द्वैतवाद), ५) श्रीबल्लभाचार्य (शुद्धाद्वैतवाद), ६) श्रीबलदेव विद्याभूषण और ७) श्रीजीव गोस्वामी (अचिन्त्य-भेदाभेद)।

श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय वैष्णव चतुः सम्प्रदायों में (रामानुज, माध्वा, विष्णुस्वामी और निम्बार्क) अन्यतम है। श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के चतुर्थ आचार्य श्री निम्बार्कदेव का नाम प्रचलित होने पर भी, इस सम्प्रदाय के प्रथम आचार्य हुए श्रीहंस भगवान। श्रीहंस भगवान ने चतुःसन (सनक्, सनन्दन,

सनातन एवं सनत्कुमार – ब्रह्मा के मानस चतुष्ट्य पुत्रगण) पुत्रों में ब्रह्मविद्या एवं गुरुशक्ति संचार किया था। वही ब्रह्मविद्या एवं गुरुशक्ति सनकादि चतु:सन ने देवर्षि नारद को प्रदान किया था। देवर्षि नारद ने श्रीनिम्बार्काचार्य को वही गुरुशक्ति सम्प्रदान किया था एवं श्रीनिम्बार्काचार्य ने अपने शिष्य श्रीनिवासाचार्य में उसी शक्ति का संचार किया। श्रीनिवासाचार्य एवं उनके परवर्त्ती आचार्य एवं शिष्यगण भी अपने शिष्यगणों के मध्य उपदेश एवं गुरुशक्ति का संचार करते आये हैं। इसी प्रकार इस सम्प्रदाय के मूल-धारा के ५८ वें आचार्य व्रजविदेही व वैष्णव चतु: सम्प्रदाय के श्री महन्त १०८ स्वामी रामदास काठिया बाबाजी गुरुशक्ति में इस सम्प्रदाय के आचार्यों के मध्य अन्यतम दिक्पाल एवं अध्यात्म जगत् के एक महान दिग्दर्शक के रूप में प्रसिद्ध एवं असामान्य योगविभूति के अधिकारी हुए थे। इन पचपन (५५) आचार्यों के सहस्रों शिष्य एवं हजारों शिष्याएँ हैं। इन लोंगों का कथन ही हुआ निम्बार्कद्वारा या निम्बार्कधारा।

श्रीनारद मुनि

प्राय: पाँच हजार वर्ष सुप्राचीन इस निम्बार्क सम्प्रदाय के चतुर्थ आचार्य श्रीनिम्बार्काचार्य थे सुदर्शन चक्र का अवतार जिसने द्वापर युग के अंत में विष्णु द्वारा आदेश पाकर पृथ्वी पर जन्म ग्रहण किया एवं निम्बार्क या निम्बादित्य नाम से प्रसिद्ध हुए। वे अपने दार्शनिक मतवाद, आध्यात्मिक भावधारा एवं साधनप्रणाली को विभिन्न पुस्तकों में लिपिबद्ध कर गये हैं। निम्बार्क सम्प्रदाय अतिप्राचीन व सनातन होने के बावजूद भी, प्रचारविमुख होने के कारण इस सम्प्रदाय के प्रचार बहुत कम हैं। कठोर त्याग, वैराग्य, कृच्छसाधन एवं तपस्या वेदी पर यह सम्प्रदाय प्रतिष्ठित है इसीलिए इस उच्च आदर्श के अनुगामियों की संख्या हमेशा ही कम रही है। निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य लोग योगी, विषय वासनामुक्त, आत्मव्रती, तपोनिष्ठ होते हैं। उन सबों ने कभी भी अनुगामी बुद्धि में मनोंनिवेश नहीं किया। वे लोग प्रकृत दिव्य ज्ञानी आत्मतत्त्वविद् महापुरुष। मनुष्य का यथार्थ कल्याण साधन ही उनका धर्मानुशील एवं व्रत है। निम्बार्काचार्य के पूर्व भारतवर्ष के साधु-संत, साधक भक्तजन केवल श्री कृष्ण को ही अपना आराध्य देवता मानकर युगों-युगों से पूजा अर्चना करते आए हैं। श्रीमद्भागवत में भी श्री राधा का कोई उल्लेख नहीं है। प्रधान गोपिनी कहकर उल्लिखित है। श्रीनिम्बार्काचार्य देव ने ही सर्व प्रथम भारत में श्रीराधा-कृष्ण की युगल मुर्ति की मधुरोपासना का प्रवर्तन किया। क्यों कि श्रीराधा ही श्रीकृष्ण की आह्लादिनी शक्ति हैं। दोनों की दो पृथक काया के उपरांत भी वे अभेद् आत्मा हैं। जैसे चने का दो दाल मिलकर स्वयं एक सम्पूर्ण चना बनता हैं। श्रीराधा-कृष्ण दो मिलकर हुए अखंड अनंत सत्ता।

श्रीराधा-कृष्ण की युगल-विग्रह मूर्ति ही निम्बार्क सम्प्रदाय की उपास्य हैं। तत्त्वज्ञान के साथ भक्ति-शरणागति और आत्मसमर्पण की साधना ही इस संप्रदाय का मूल सिद्धान्त है। श्रीगुरु शरणागत एवं आत्माभिमान त्याग ही इस साधन का अति प्रयोजनीय अंग है। एकमात्र श्रीसद्गुरु ही शरणागत को ब्रह्मप्राप्ति करा सकते हैं। श्रीसद्गुरु कृपा के बिना कोई भी जीव स्वप्रयास से कभी भी ब्रह्मज्ञान-लाभ या तत्त्व-युक्त ईश्वर को ज्ञात नहीं कर पायेंगे। गुरु का ज्ञानवृत्ति योग और प्रपत्ति या शरणागति योग निम्बार्क सम्प्रदाय के मुख्य स्थान में अवस्थित है। उसी निम्बार्क संप्रदाय के ५४ वें आचार्य महापुरुष योगीराज श्रीरामदास काठियाबाबा महाराज जी निम्बार्क दर्शन के मुमुक्षु मानवों के चिरप्रार्थित मोक्षदायक रूप को उन्होंने मानस में संस्थापित किया था, इसीलिए श्रीधाम वृंदावन में उनके द्वारा आसन की प्रतिष्ठा हुई थी।

''संप्रदाय'' शब्द का अर्थ हुआ सम्यक् रूप से विद्या प्रदान करना। इस सम्यक् रूप से ज्ञान प्रदान के अधिकार को ''संप्रदाय गुरुक्रम'' कहते हैं। 'संप्रदाय' का अंतर्निहित अर्थ हुआ आचार्य परंपरा द्वारा सिद्ध मंत्र और साधन प्रदान करना।

श्रीमद्भागवत् के एकादश स्कन्द के त्रयोदश अध्याय में है – ब्रह्मा के चार मानस पुत्र, आजन्म ब्रह्मचारी ब्रह्मर्षि सनन्दन, सनातन, सनक और सनत्कुमार ने मृत्युग्रस्त, दु:खमय इस भवसागर से परित्राण हेतू उपाय के लिए, कमलासन ब्रह्मा से प्रार्थना किया। ब्रह्मा ने उनके प्रश्न का उत्तर प्रदान करने में स्वयं को असमर्थ पाकर, इस प्रश्न के उत्तर की प्राप्ति हेतू श्रीभगवान का ध्यान किया; श्रीभगवान ब्रह्मा के पास हंसरूप में आविर्भूत हुए –

''स माम चिन्त्यदेव: प्रश्नपारतिर्तीसया।
तस्य: हंसरूपेण सकाशगमन: तदा।।''

(भा ११/१३/१७)

यहाँ पर 'हंस' शब्द का अर्थ हंस पक्षी नहीं है, 'हंस' परमात्मा ईश्वर का एक नाम है। तथा हंस शब्द ब्रह्मज्ञ आत्मदर्शी मुनि को भी इंगित करता है। श्रीभगवान ने इसी तरह मुनिरूप में ही (जो हंस पदवाच्य हैं) आविर्भूत होकर सनकादि ऋषियों को परमगुह्य आत्मज्ञान का उपदेश प्रदान किया। इन सनकादि ऋषियों के शिष्य हैं देवर्षि नारद। ये लोकपितामह ब्रह्मा के अंग से उद्भूत हैं। आध्यात्मिकता के मूर्त्त विग्रह हैं देवर्षि नारद। प्रथम जन्म में देवर्षि नारद ब्रह्मा के मानस पुत्र तथा, द्वितीय जन्म में उपवर्हण नामक गंधर्व वंश में जन्म ग्रहण किया। तृतीय जन्म में दासीपुत्र हुए। चतुर्थ जन्म में पुन: ब्रह्मा के पुत्र हुए। पंचम जन्म में वे श्रीभगवान के पार्षद एवं तत्पश्चात् प्रलयान्त में षष्ठ जन्म में ब्रह्मा के पुत्र सार्थक नामक देवर्षि नारद हुए। इसप्रकार देवर्षि नारद के विविध जन्मों का विवरण शास्त्रों में उद्धृत है। जीवों के कल्याण हेतू, धर्मशिक्षा देने के लिए नारद ने – ''नारद-पंचरात्रम्'', ''नारदीय भक्ति सूत्र'' ग्रंथ, वैष्णव तंत्र, भक्ति शास्त्र इत्यादि अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया था।

श्रीनिम्बार्काचार्य

इसी देवर्षि नारद के शिष्य थे श्रीनिम्बार्काचार्य। इनके पिता थे अरुण ऋषि तथा माता का नाम था जयन्ती। श्रीनिम्बार्काचार्य ने कार्त्तिक पूर्णिमा के दिन दक्षिण में गोदावरी तट पर स्थित पितृ आश्रम में जन्म ग्रहण किया। उनका नाम था श्रीनियमानन्द। श्रीनिम्बार्क का जन्म काल कल्यब्द १५ अर्थात् आज से ५००० वर्ष पूर्व का है। श्रीनिम्बार्काचार्य, शंकराचार्य के पूर्ववर्त्ती हैं ऐसा विद्जनों का मत है। श्रीनियमानन्द के बाल्यकाल में ही देवर्षि नारद ने उनके पितृ आश्रम में ही उनका दीक्षा दान किया। देवर्षि ने उनका नाम रखा हरिदास-हरिप्रिया। बादमें उनको गायत्री मंत्र, विष्णुभक्ति, रहस्य मंत्र, वेद, उपनिषद् वेदान्त एवम् अष्टादशाक्षरी गोपाल मंत्र आदि का दीक्षा दान किया। श्रीनियमानन्द का जीवन अनेक अद्भुत तथा विस्मयकारी घटनाओं का संग्रह है। उनमें से एक घटना का उल्लेख किया जा रहा है। एकबार एक दिवावसान में उनके गृह अरुणाश्रम में एक दण्डी स्वामी का आगमन हुआ। नियमानन्द सादर उनका कुशलक्षेम पुछकर उनके अतिथि सत्कार में तत्पर हुए। गृह में कुछ भी खाद्यान्न न होने पर भी योगसिद्ध बालक ने योगबल से आहार उपलब्ध कर उसे साधु के समक्ष प्रस्तुत किया। धीरे-धीरे संध्या हो गयी। सूर्यास्त के उपरांत साधुओं के लिए आहार नियम-विरूद्ध है, यह कहकर उन्होंने आहार ग्रहण में असमर्थता प्रकट की। तब नियमानन्द ने आश्रम में स्थित निम्ब वृक्ष के ऊपर चढ़कर सुदर्शन चक्र का आह्वान किया और उसे उसी वृक्ष के ऊपर स्थापित कर दिया। उस सुदर्शन चक्र को सूर्यसम् समुज्ज्वल और प्रभायुक्त देखकर, साधु को ऐसा लगा कि सूर्य अस्त नहीं हुए है, और उन्होंने आहार सामग्री ग्रहण की। अतिथि सत्कार के उपरांत नियमानन्द द्वारा सुदर्शन चक्र को स्वस्थान प्रेषण करने के बाद, साधुजी ने देखा कि इस समय तो गहन रात्रि है। उस तरह की अचिन्तनीय विस्मयकारी घटना देखकर उन्होंने समझ लिया कि नियमानन्द कोई साधारण मनुष्य नहीं है, भगवत् शक्ति से शक्ति सम्पन्न योगेश्वर। तब श्रद्धा से उन्होंने सिर झुका दिया। इसी घटना के कारण उनका नाम निम्बार्क या निम्बादित्य हुआ। निम्ब तिक्त, कसाय, कड़वा। संसार तिक्त, कसाय, कड़वा अर्थात् नीम की तरह कड़वा। तिमिराच्छन्न मायाबद्ध संसारियों के लिए वे अर्क अर्थात् जो अंधकार नाशक सूर्य स्वरूप हैं वही है निम्बार्क।

शंख, चक्र और तिलक श्रीनिम्बार्क संप्रदाय का प्रतीक है। यह प्रतीक आध्यात्मिक पथ प्रदर्शक है। श्रीनिम्बार्क दर्शन स्वाभाविक द्वैताद्वैत भित्ति पर सुगठित एवं सर्व शास्त्र समर्थित है। उनके मतानुसार ब्रह्म सविशेष और निर्विशेष, सगुण और निर्गुण उभय। जीव जगत् उनका अंश विशेष है। जीव जगत् के साथ ब्रह्म का अंश-अंशी, भेदाभेद अर्थात् द्वैताद्वैत संबंध है। जीव जगत् समग्र रूप से ब्रह्म के अधीन है। जीव जगत् के साथ ब्रह्म का जैसा भेद है वैसा उसका

इस जगत् के साथ अभेद भी है। दोनों ही समान रूप से सत्य है। जीव अणु, ब्रह्म विभु। जीव अंश, अल्पज्ञ, ब्रह्म सर्वज्ञ-पूर्ण। जीव अल्पशक्तिमान, ब्रह्म सर्वशक्तिमान। मुक्तावस्था में भी जीव को सृष्टि, स्थिति और लय की शक्ति प्राप्त नहीं होती। इसीलिए जीव और ब्रह्म में भेद है, और ब्रह्म की तरह ही जीव सत्, चित्, आनन्द अनुसृत प्रकाश में तारतम्य होने पर भी परमब्रह्म की तरह ही जीव ज्ञान स्वरूप या चित् स्वरूप है। इस प्रकार जीव और ब्रह्म में अभिन्नता भी है। जीव और ब्रह्म के मध्य भेद और अभेद दोनों ही वर्तमान है। जो परमेश्वर अंतर्यामी, जगत्रूपी, सर्वसाक्षी निर्मलस्वरूप है, वे ही भिन्न-भिन्न रूपों में सर्वत्र अवस्थान करते हैं। वृक्ष अपने शाखा प्रशाखा से कई गुणा बड़ा और व्यापक होता है, फिर शाखा-प्रशाखा और पत्ती विहीन वृक्ष का अस्तित्व ही नहीं है। अर्थात् शाखा और प्रशाखा वृक्ष का ही एक अखंड अंश होने के कारण अभेद है। ब्रह्म, जीव-जगत् रूप में प्रकाशित होकर भी तदातीत रूप में जब अवस्थित हैं, तब ब्रह्म जीव-जगत् से भिन्न हैं। पुनः जीव-जगत् के एकमात्र उपादान और निमित्त कारण होने के कारण, ब्रह्म जीव-जगत् से अभिन्न भी है। अर्थात् ब्रह्म के साथ जीव-जगत् का भेदाभेद या द्वैताद्वैत संबंध है। सूर्य और सूर्यलोक में जैसा संबंध है वैसा ही ब्रह्म और जीव में संबंध है। जैसे सूर्य की किरण और उस किरण का प्रकाशदाता हुआ सूर्य। प्रायः समस्त वैष्णवाचार्यों ने थोड़ा बहुत परिवर्तन कर निम्बार्काचार्य के मत को ग्रहण किया हैं। श्रीरामानुज ब्रह्म के साथ जीव के सायुज्य को अस्वीकार करते हैं। श्रीमाध्वाचार्य के मतानुसार ब्रह्म और जीव में सर्वदा ही एक विशेष भेद है। श्रीजीव गोस्वामी के विचार से जीव और ब्रह्म के मध्य अचिन्त्य भेदाभेद है। श्रीरामानुज और श्रीमाध्वाचार्य के ईश्वर विष्णु नारायण हैं। श्रीजीव गोस्वामी के प्रभु श्रीकृष्ण हैं। निम्बार्कदेव के आराध्य युगल राधा-कृष्ण हैं। श्रीशंकराचार्य के मतानुसार ब्रह्म निर्गुण, निर्विशेष और निराकार हैं। वे (ब्रह्म) माया द्वारा उपाधि विशिष्ट होकर सृष्टि, पालन और संहार करते हैं। वैष्णवाचार्य कहते हैं ब्रह्म मायातीत हैं यानि माया उनको आवृत नहीं कर सकती है।

ईश्वर सृजित इस अनित्य विश्व में मनुष्य जितने दिन अवस्थान करता है उतने दिन उसके हेतु यह जगत् सत्य प्रतीत होता है। जागतिक सत्य, वास्तव में सत्य है। इसी कारण निम्बार्काचार्य ने बताया अद्वैत भी सत्य है एवं द्वैत भी। इस संप्रदाय के आचार्यगण ''काठियाबाबा'' के नाम से सुपरिचित है। कठोर कृच्छ्रसाधन, ब्रह्मचर्य, नैष्ठिकता, निरलस (आलस्यहीन) साधन प्रक्रिया के अंगस्वरूप सर्वत्यागी साधुगण, काष्ठ की बंधनी या आरबंध का प्रयोग करते हैं।

युग-युगान्तर से इस संप्रदाय के आचार्यगण गुरुपरंपराक्रम में ब्रजचौरासी क्रोस की परिक्रमा एवं कुंभ मेला अनुष्ठान, सार्थक भाव से परिचालित करते आ रहे हैं। कुंभ मेला में इस निम्बार्क संप्रदाय के महंत को चतुःसंप्रदाय के श्रीमहंत के गणनानुसार कुंभ मेले के हजारों साधुओं एवं भक्त जनों के आश्रय की सार्वजनिक व्यवस्था करनी पड़ती है। श्रीवृंदावन के निम्बार्क संप्रदाय के महंत का एक प्रधान दायित्व होता है चौरासी क्रोस ब्रज परिक्रमा का परिचालन करना। इस संप्रदाय के अड़तीस (३८) वें आचार्य ने वृंदावन में लुप्तप्राय इस ब्रजपरिक्रमा को नवीन रीति से प्रारंभ किया। उस समय से आज तक प्रायः ५००० वर्षों से गुरुपरंपरा के हजारों साधु संतों भक्तों के लिए जन्माष्टमी के बाद एकादशी तिथि से दीर्घ डेढ़ मास चलनेवाली यह ब्रज परिक्रमा चली आ रही है।

श्रीनिम्बार्क संप्रदाय के प्रथम धारा के पैंतीस (३५) वे आचार्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्य के प्रधान शिष्यों के मध्य दो शिष्य अन्यतम् थे श्रीस्वभृराम देवाचार्य एवं श्रीपरशुराम देवाचार्य। सलीमाबाद में श्रीपरशुराम देवाचार्य के निम्बार्काचार्य पीठ में श्रीसर्वेश्वर भगवान का आसन प्रतिष्ठित है। ये अत्यंत लघु मरीच (गोल मिर्च) आकृति की तरह कृष्णवर्ण शालीग्राम शिला हैं। यह वृतांत पद्मपुराण में उद्धृत है। यह शिला सनकादि ऋषियों द्वारा सेवित एवं गुरुपरंपरा क्रम से श्रीपरशुराम देवाचार्य द्वारा सेवित है तथा वर्तमान में इस आश्रम के आचार्य देव श्रीश्रीराधा सर्वेश्वरशरण देवाचार्य श्रीजी महाराज द्वारा पूजित हो रही है। इस पीठ पर भक्ति सिद्धा प्रेम रस सिक्त मीराबाई, जिनकी पूजित श्रीगिरिधारी गोपाल जी प्रतिष्ठित हैं। मीराबाई एवं उनके माता-पिता सभी श्रीपरशुरामाचार्य के शिष्यों में सम्मिलित थे। इन्होंने ही मीराबाई की बाल्यावस्था में गीत सुनकर एवं मुग्ध होकर श्रीगिरिधारी गोपाल विग्रह को उपहार स्वरूप प्रदान किया। मीराबाई आजीवन इस मूर्ति की पूजा-अर्चना करती रहीं। कवि साधक जयदेव, निम्बार्क संप्रदाय के अन्तर्गत थे। उनके गुरु निम्बार्काचार्य श्रीयशोदानन्दन देवाचार्य थे। श्रीजयदेव पूजित श्रीराधामाधव

विग्रह आजकल सलीमाबाद के आचार्य पीठ के गद्दी पर प्रतिष्ठित है। सुर-सम्राट तानसेन के गुरु थे, निम्बार्क संप्रदाय के योग विभूति, ऐश्वर्य के अधिकारी महान संगीतज्ञ स्वामी हरिदास जी। तानसेन ने उनसे मेघमल्हार के साथ बहुत सारे राग एवं रागिनियों की शिक्षा प्राप्त की थी। दिल्ली नवाब अकबर भी इनके प्रति विशेष आकृष्ट हुए थे। अकबर, स्वामी हरिदास जी को दिल्ली ले जाना चाहते थे, मगर वे वृंदावन छोड़ कर दिल्ली जाना नहीं चाहते थे। इस संप्रदाय में पचपन (५५) गुरुपरंपरा के आचार्यों के अलावा, बंगलादेश में और भी कई उच्चकोटि के साधक, साधिका, आचार्य इत्यादि महात्मा लोग हुए हैं। जैसे, श्रीअनंतदास जी, श्रीधनंजयदास जी, श्रकृष्णदास जी, श्री रामकृष्णदास जी, श्रीप्रेमदास जी, श्रीअर्जुनदास जी, श्रीजगन्नाथदास जी, श्रीमनोहरदास जी, श्रीअन्नदा माँ, श्रीगंगा माँ, श्रीशोभा माँ इत्यादि महात्मागण जो दु:ख कष्ट जर्जरित कलिकाल के जीवों के उद्धार हेतू इस धरा धाम पर आरोहित हुए थे।

–श्री विजन कुमार सेनगुप्त

(हिन्दी अनुवाद–मातृचरणाश्रित श्रीविमलानन्द)